0751CH32

32 भीष्म शर-शय्या पर

दसवें दिन का युद्ध शुरू हुआ। आज पांडवों ने शिखंडी को आगे किया था। आगे-आगे शिखंडी और उसके पीछे अर्जुन। शिखंडी की आड़ से अर्जुन ने पितामह पर बाण बरसाए। शिखंडी के बाणों ने वृद्ध पितामह का वक्ष-स्थल बींध डाला। भीष्म ने अपने चेहरे पर ज़रा भी शिकन न आने दी और शिखंडी के बाणों का प्रत्युत्तर नहीं दिया। अर्जुन ने जब यह देखा कि पितामह प्रतिरोध नहीं कर रहे हैं, तो ज़रा जी कड़ा करके उसने भीष्म के मर्म-स्थानों को लक्ष्य करके तीखे बाणों से बींधना शुरू कर दिया। भीष्म का सारा शरीर बिंध गया, पर इतने पर भी उनका मुख मलिन न हुआ। भीष्म ने अर्जुन पर शक्ति-अस्त्र चलाया। अर्जुन ने उसे तीन बाणों से काट गिराया। अब भीष्म को यह निश्चय हो गया था कि आज का युद्ध उनका आखिरी युद्ध होगा। इस कारण वह हाथ में ढाल-तलवार लेकर रथ से उतरने लगे। अर्जुन का बाण बरसाना जारी था। उसके बाणों ने पितामह के शरीर में उँगली रखने की भी जगह न छोड़ी थी। पितामह के सारे शरीर में बाण-ही-बाण घुस गए थे। ऐसी अवस्था में ही भीष्म रथ से सिर के बल ज़मीन पर गिर पड़े। भीष्म गिर तो गए, लेकिन उनका शरीर भूमि से नहीं लगा। सारे शरीर में जो बाण लगे हुए थे वे एक तरफ़ से घुसकर दूसरी तरफ निकल आए थे। भीष्म का शरीर ज़मीन पर न गिरकर उन तीरों के सहारे ही ऊपर उठा रहा। पितामह अर्जुन से बोले–"बेटा अर्जुन, मेरे सिर के नीचे कोई सहारा नहीं है। वह लटक रहा है। कोई ठीक-सा सहारा तो लगा दो।"

भीष्म ने ये वचन उसी अर्जुन से कहे, जिसने अभी-अभी प्राणहारी बाणों से उनको बींध डाला था। भीष्म का आदेश सुनते ही अर्जुन ने अपने तरकस से तीन तेज़ बाण निकाले और पितामह का सिर उनकी नोंक पर रखकर उनके लिए उपयुक्त तकिया बना दिया।

भीष्म बोले–"हे राजागण! अर्जुन ने मेरे लिए जो सिरहाना बनाया है, उसी से मैं प्रसन्न हुआ हूँ। अभी मेरा शरीर-त्याग करने का उचित समय नहीं हुआ है। अतः सूर्यनारायण के उत्तरायण होने तक मैं यहीं और ऐसा ही पड़ा रहूँगा। आप लोगों में से जो भी उस समय तक जीवित बचें, वे आकर मुझे देख जाएँ।"

इसके बाद पितामह ने अर्जुन से कहा–"बेटा! मेरा सारा शरीर जल रहा है और प्यास लग रही है। थोड़ा पानी तो पिलाओ।"

अर्जुन ने तुरंत धनुष तानकर भीष्म की दाहिनी बगल में पृथ्वी पर बड़े ज़ोर से एक तीर मारा। बाण पृथ्वी में घुसकर सीधा पाताल में जा लगा। उसी क्षण उस स्थल से जल का एक सोता फूट निकला। और पितामह भीष्म ने अमृत के समान मधुर और शीतल जल पीकर अपनी प्यास बुझाई। वह बहुत ही खुश और प्रसन्न दिखाई दिए।

जब कर्ण को यह पता चला कि पितामह भीष्म घायल होकर रणक्षेत्र में पड़े हैं, तो वह उनके पास गया। प्रणाम करके जब कर्ण उठा, तो पितामह को उसके मुख पर भय की छाया-सी दिखाई दी। यह देखकर भीष्म का दिल भर आया। शरीर पर लगे हुए बाणों से होनेवाले कष्ट को दबाकर बोले–"बेटा, तुम राधा के पुत्र नहीं, कुंती के पुत्र हो। सूर्यपुत्र! मैंने तुमसे कभी द्वेष नहीं किया। अकारण ही तुमने पांडवों से वैर रखा। इसी कारण तुम्हारे प्रति मेरा मन मलिन हुआ। तुम्हारी दान-वीरता और शूरता से मैं भली-भाँति परिचित हूँ। इसमें कोई संदेह नहीं कि शूरता में तुम कृष्ण और अर्जुन की बराबरी कर सकते हो। तुम पांडवों में ज्येष्ठ हो। इस कारण तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम उनसे मित्रता कर लो। मेरी यही इच्छा है कि युद्ध में मेरे सेनापतित्व के साथ ही पांडवों के प्रति तुम्हारे वैरभाव का भी आज ही अंत हो जाए।"

यह सुनकर कर्ण बड़ी नम्रता के साथ बोला–"पितामह! मैं जानता हूँ कि मैं कुंती का पुत्र हूँ, लेकिन यह भी मुझे मालूम है कि मैं सूत-पुत्र नहीं हूँ, लेकिन यह बात मुझसे नहीं हो सकती कि अब मैं दुर्योधन का साथ छोड़ दूँ और उनके शत्रुओं से जा मिलूँ। मेरा कर्तव्य यही है कि मैं दुर्योधन के ही पक्ष में रहकर युद्ध करूँ। आप कृपया मुझे इस बात की अनुमति दें कि मैं दुर्योधन की तरफ़ से लड़ूँ। मैंने जो कुछ किया या कहा है, उसमें जितने दोष हों, उसके लिए मुझे क्षमा कर दें।"

कर्ण का कथन भीष्म बड़े ध्यान से सुनते रहे। उसके बाद बोले–"जो तुम्हारी इच्छा हो, वही करो।"

भीष्म पितामह से आशीष पाकर कर्ण बहुत प्रसन्न हुआ और रथ पर चढ़कर युद्धक्षेत्र में जा पहुँचा। कर्ण को देखते ही दुर्योधन आनंद के मारे फूल उठा। भीष्म के बिछोह का जो दुख उसके लिए दु:सह-सा प्रतीत हो रहा था, अब कर्ण के आ जाने पर किसी तरह उसे भूल जाना उसके लिए संभव मालूम होने लगा।

दुर्योधन और कर्ण इस बारे में सोच-विचार करने लगे कि अब सेनापति किसे बनाया जाए। रीति से द्रोणाचार्य का सेनापति-पद पर अभिषेक हुआ। द्रोणाचार्य ने पाँच दिन तक कौरवों की सेना का संचालन करते हुए घोर युद्ध किया। यद्यपि अवस्था में वह बूढ़े थे, फिर भी सात्यकि, भीम, अर्जुन, धृष्टद्युम्न, अभिमन्यु, द्रुपद, काशिराज आदि सुविख्यात वीरों के विरुद्ध द्रोणाचार्य अकेले ही भिड़ जाते थे और एक-एक को खदेड़ देते थे। पाँचों दिन तक उनके हाथों पांडवों की सेना बहुत ही सताई गई। आचार्य द्रोण ने पांडव-सेना की नाक में दम कर दिया। द्रोणाचार्य के सेनापतित्व ग्रहण करने के बाद दुर्योधन, कर्ण और दु:शासन– तीनों ने आपस में सलाह करके एक योजना बनाई। उसके अनुसार दुर्योधन आचार्य के पास जाकर बोला–"आचार्य! किसी भी उपाय से आप युधिष्ठिर को जीवित ही पकड़ कर हमारे हवाले कर सकें तो बड़ा ही उत्तम हो!"

दुर्योधन का उद्देश्य तो कुछ और ही था। दुर्योधन को यह भी पता चल गया था कि युधिष्ठिर का वध करने से कोई लाभ नहीं हो सकता। इसके विपरीत यदि युधिष्ठिर को जीवित पकड़ लिया जाए, तो युद्ध भी शीघ्र ही बंद हो जाएगा और जीत भी कौरवों की होगी। थोड़ा राज्य युधिष्ठिर को देने का बहाना करना होगा, सो वह कर देंगे और बाद में फिर जुआ खेलकर सहज ही में उसे वापस छीन भी लेंगे। इन्हीं सब विचारों से प्रेरित होकर दुर्योधन ने द्रोणाचार्य से युधिष्ठिर को जीवित पकड़ लाने का अनुरोध किया था। लेकिन द्रोण को जब दुर्योधन के असली उद्देश्य का पता लगा, तो वह बहुत उदास हो गए। इससे उनके मन में दुर्योधन के प्रति तीव्र घृणा उत्पन्न हो गई। मन-ही-मन यह सोचकर उन्होंने संतोष कर लिया कि युधिष्ठिर के प्राण न लेने का कोई-न-कोई बहाना तो मिल ही गया।

पांडव तो द्रोणाचार्य की अद्वितीय शूरता एवं शस्त्र विद्या के अनुपम ज्ञान से भली-भाँति परिचित ही थे। अतः जब सुना कि द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर को पकड़ने का निश्चय ही नहीं किया है, बल्कि प्रतिज्ञा भी की है, तो वे भी भयभीत हो गए। सबको यही चिंता रहने लगी कि किसी भी तरह युधिष्ठिर की रक्षा का पूरा-पूरा प्रबंध किया जाए। द्रोण ने अपने सारथी को आज्ञा दी कि रथ को उस ओर ले चलो, जिधर युधिष्ठिर युद्ध कर रहे हों। युधिष्ठिर सँभले, इससे पहले ही द्रोणाचार्य वेग से उनके निकट जा पहुँचे। धृष्टद्युम्न ने हज़ार चेष्टा की, परंतु वह द्रोण को नहीं रोक सका।

'युधिष्ठिर पकड़े गए!' 'युधिष्ठिर पकड़े गए!' की चिल्लाहट से सारा कुरुक्षेत्र गूँज उठा। इतने ही में एकाएक न जाने कहाँ से अर्जुन उधर आ पहुँचा और अर्जुन के गांडीव से बाणों की ऐसी अविरल बौछार छूट रही थी कि कोई देख ही नहीं पाता था कि कब बाण धनुष पर चढ़ते और कब छूटते थे। कुरुक्षेत्र का आकाश बाणों से भर गया। इस कारण सारे मैदान में अंधकार-सा छा गया।

अर्जुन के हमले के कारण द्रोणाचार्य को पीछे हटना पड़ा। युधिष्ठिर को जीवित पकड़ने का उनका प्रयत्न विफल हो गया और संध्या होते-होते उस दिन का युद्ध भी बंद हो गया। कौरव-सेना में भय छा गया। पांडव-सेना के वीर शान से अपने-अपने शिविर को लौट चले। सैन्य-समूह के पीछे-पीछे चलते हुए कृष्ण और अर्जुन अपने शिविर में जा पहुँचे। इस प्रकार ग्यारहवें दिन का युद्ध समाप्त हुआ।